B.M.A COLLEGE , BAHERI,DARBHANGA
(A CONSTITUENT UNIT OF LNMU)
BA DEGREE-1
HISTORY HONS.
UNIT-2(II)
DEPARTMENT OF HISTORY
PANKAJ KUMAR MISHRA
DATE-21/10/2020

TOPIC- धार्मिक आंदोलन- जैन धर्म

RELIGIOUS MOVEMENT-JAINISM

PART-5

Scanned with CamScanner

धार्मिक आंदोलन - जैन धर्म

जैन धर्म के सिद्धान्त —

जीव और अजीव :— जैन धर्म मुख्य रूप से दो तत्वों में विश्वास करता है - एक, जीव और दूसरा अजीव। दोनों ही तत्व शाश्वत, अनादि और अनंत है। इनसे ही मिलकर यह जगत बनता है। इसलिए वे अनादि और अनंत है। उनका कर्ता भी कोई नहीं है। जीव ही आत्मा है, दोनों ही एक ही तत्व है। जैन धर्म में आत्मा के अस्तित्व को विश्वास सहित और ज्ञानपूर्वक माना गया है। जीव चैतन्य द्रव्य है और अजीव चैतन्यरहित है। जीव का विस्तार शरीर के अनुसार होता है। इसका कार्य अनुभूति है अर्थात् सुख, दुःख, संवेद, ज्ञान आदि सभी का अनुभव होता है। जीव - अजीव के ढाँचे (शरीर) में रहता है। अजीव अवस्था जड़ पदार्थ को "पुद्गल" कहते हैं। पुद्गल उस वस्तु को कहते हैं जिसे जोड़कर बड़ा किया जा सके अथवा तोड़कर छोटा किया जा सके। इसका सबसे लघुतम भाग परमाणुओं के आपस में मिलने से ही इस भौतिक संसार के विभिन्न रूप बनते हैं, जिसके पाँच गुण हैं। ये इस प्रकार है - स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्द। इस प्रकार, जीव तथा अजीव के मिलने से जगत की रचना होती है। जीव और अजीव के संबंध का माध्यम "कर्म" है। पुद्गल ही कर्म है जो जीव को घेरे रहता है जैसे स्नान में धातु मिट्टी में मिली रहती है, उसी प्रकार जीव इस 'कर्म' नाम के सूक्ष्म मैटर से सना रहता है। वह हर समय जीव से चिपका रहता है - कर्म जीव पर रूप, रंग, रस और गंध की विभिन्न छाप लगाते हैं, जिसे लेश्या (लेश्या) कहते हैं। इनसे पृथक होने अर्थात् पुद्गल से अलग होना, कर्म के बंधन को तोड़ना है। कर्म के बंधन को तोड़ने का अर्थ है - जन्म-मरण और पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त होना। इसी का नाम मोक्ष है।

बंधन और मुक्ति —

बंधन के मुख्य कारण है - राग और द्वेष। इनसे ही चार कषायों क्रोध, माया, मान और लोभ का उदय और विकास होता है। राग और द्वेष जीव में आसक्ति या कामना का दुर्भाव पैदा करते हैं। इनसे जीव अपना विवेक खो बैठता है और दुनिया में भटकता रहता है। वह राग और द्वेष से उत्पन्न कषायों - हिंसा, झूठ, चोरी, लोभ आदि का आश्रय लेता है। जैनागमन में "कर्म" क्रिया को नहीं कहते, बल्कि पुद्गल परमाणुओं को कहते हैं। पुद्गल परमाणुओं का बहना या बजना "आश्रव" कहलाता है। यही आश्रव व्यक्ति के कर्मबंध का कारण होता है। वह हिंसा आदि को सच और पाने योग्य समझकर ज्योंही तदनुसार आचरण करता है, तो कर्म के बंधनों से बंध जाता है। इसी को बंध कहते हैं। इसीलिए 'आश्रव' और बंध पुनर्जन्म के मुख्य कारण है। इसलिए पुण्य बंध की अवस्था में जीव में यह विवेक बना रहता है

कि क्या चीज ग्रहण करने योग्य है और क्या चीज छोड़ने योग्य है। इस प्रकार की जिज्ञासा का उदय ही राग-द्वेष पर रोक लगाता है। इस रोक को 'संवर' कहते हैं। इस संवर के परिणामस्वरूप धीरे-धीरे संचित कर्म कटते या नष्ट हो जाते हैं। कर्मनाश की इस प्रक्रिया को "निर्जरा" कहते हैं। पूर्ण निर्जरा की स्थिति का ही दूसरा नाम मुक्ति है।

31/10/2020